वैश्वीकरण की चुनौती : रिज़र्व बैंक के परिप्रेक्ष्य में कुछ प्रतिबिंब *

दुव्वुरी सुब्बाराव

आईआईएम बेंगलुरु के दीक्षांत समारोह में भाषण देने के लिए मुझे आमंत्रित करने के लिए आपका धन्यवाद। यह सम्मान मेरे लिए बहुत मूल्यवान है।

2. सबसे पहले सभी स्नातक छात्रों को मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ। आज का दिन आपके जीवन में एक मील का पत्थर है। आज आप इस कॉलेज से बाहर जाएँगे प्रबंधन की डिग्री के साथ, और यह कोई ऐसी वैसी डिग्री नहीं, बल्कि देश के सर्वाधिक प्रख्यात मैनेजमेंट स्कूल की डिग्री। जो कार्य आपने किया है उस पर आपको गर्व होना चाहिए।

परिवर्तन का प्रबंधन

3. आप सभी स्नातक छात्रों को जब मैं अपने सामने देखता हूँ तो मेरा मन चालीस वर्ष पूर्व मेरी अपनी ग्रेज्युएशन के वक्त में वापस जाता है और मेरे और आपके समय के बीच हुए बदलावों की ओर जाता है। संसार बदल गया, भारत बदल गया, बेंगलुरु बदल गया और इन चार दशकों में मैनेजमेंट की शिक्षा भी बदल गई। जैसा कि कहा जाता है जीवन में सिर्फ परिवर्तन ही स्थिर है। इस परिवर्तन का प्रबंधन सबसे बड़ी चुनौती होती है-हमारे व्यक्तिगत जीवन में भी, और हमारे व्यावसायिक जीवन में भी।

वैश्वीकरण

4. मेरे और आपके समय में जो सबसे बड़ा बदलाव आया है वह है वैश्वीकरण - राष्ट्रीय, भाषायी, सांस्कृतिक तथा सामाजिक सरहदों को लांघते हुए वस्तुओं, मुद्रा लोगों तथा विचारों के प्रवाह में आने वाली रुकावटों में कमी। जब 40 वर्ष पहले मैंने ग्रेज्युएशन किया था तब भारत विश्व की सबसे बड़ी आंतरिक व्यवस्था प्रणाली (क्लोज्ड इकॉनोमी) थी। आज हम विश्व के साथ काफी अधिक एकीकृत हैं और वास्तव में तो उससे भी ज्यादा एकीकृत जितना कि हम स्वीकार करते हैं। जरा सोचिए जब 35 वर्ष पूर्व मैं पहली बार विदेश गया था तो हम सिर्फ 20 डॉलर बाहर अपने साथ ले जा सकते थे। आज उदारीकृत धनप्रेषण योजना (एलआरएस)[2] के अंतर्गत हर भारतीय प्रतिवर्ष 2 लाख अमरीकी डॉलर ले जा सकता है। यह एक बड़ा बदलाव है, केवल संख्या की दृष्टि से नहीं बल्कि हमारी वैश्विक दृष्टि से भी।

भारत का वैश्विक एकीकरण

5. किसी देश के वैश्विक एकीकरण की डिग्री को मापने के लिए आम तौर पर प्रयुक्त किया जाने वाला मापदंड है - जीडीपी से विदेश व्यापार का अनुपात (चार्ट-1) 1972 में जीडीपी के 8 प्रतिशत से यह अनुपात चार गुना बढ़ कर 2011 में 37 प्रतिशत तक पहुंच चुका है। इस अवधि में समूचे विश्व में धन के प्रवाह ने वस्तुओं के प्रवाह को कहीं बहुत पीछे छोड़ दिया है इसलिए किसी देश के वैश्विक एकीकरण का, अधिक पूर्ण माप, देश से और देश में, वस्तुओं और वित्त का दुतरफा प्रवाह होना चाहिए। इन चार दशकों में यह अनुपात लगभग 8 गुना हो गया है और 1972 के 14 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 109 प्रतिशत हो गया है। इसका अर्थ यह है कि भारत का व्यापार एकीकरण गहरा हुआ है, मगर इसका वित्तीय एकीकरण और भी गहरा हुआ है।

चार्ट 1 : भारत का विश्व से एकीकरण

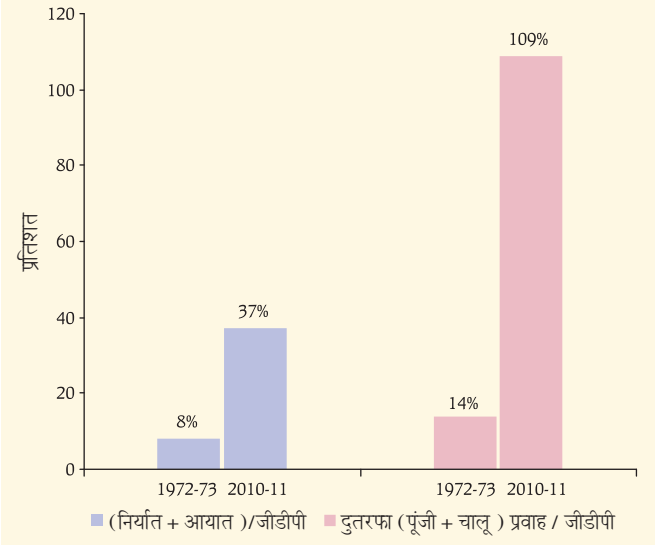

* 30 मार्च 2012 को भारतीय प्रबंध संस्थान बेंगलुरु के 37वें वार्षिक दीक्षांत समारोह में भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव का अभिभाषण।

यह चालू खाते के लेन-देनों की राशि से अतिरिक्त है।

वैश्वीकरण एक दुधारी तलवार

6. वैश्वीकरण एक दुधारी तलवार है। यह अवसर भी बहुत प्रदान करती है मगर बहुत सी निर्दयी चुनौतियाँ भी खड़ी करती है। 2008-09 का वैश्विक वित्तीय संकट इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। जरा याद करें संकट से पहले के वर्ष - अर्थात ग्रेट मॉडरेशन की अवधि में - हमारी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में निरंतर वृद्धि हो रही थी। उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में तेजी से वृद्धि हो रही थी और चारों ओर कम तथा स्थिर स्फीति थी। यह वैश्वीकरण का ही एक परिणाम था - खासकर भारत और चीन के विश्व श्रम बाज़ारों में शामिल होने के परिणामस्वरूप विश्व के उत्पादन तथा उत्पादकता में जबरदस्त तेजी का परिणाम। यदि ''ग्रेट मॉडरेशन'' वैश्वीकरण का सकारात्मक पक्ष था तो 2008-09 का वित्तीय संकट तथा उसके बाद आई भयंकर मंदी, उसका नकारात्मक पक्ष था। आवास जैसे विशुद्ध 'गैर-ट्रेडेबल-क्षेत्र' के बुलबुले ने वैश्विक वित्तीय संकट खड़ा कर दिया जिसने वैश्विक वृद्धि तथा कल्याण को हिला कर रख दिया। वह वैश्वीकरण की ताकतों की भयंकरता का जीता जागता नमूना है।

वैश्वीकरण का प्रबंध

7. आज अपने हाथो में डिग्री लेकर आप एक ऐसे विश्व में प्रवेश करेंगे जो उस विश्व से ज्यादा वैश्वीकृत है जिसमें कि मैंने अपना कैरियर लगाया। जैसा कि हमने अभी देखा, वैश्वीकरण लाभों और कीमतों पर आता है। आप चाहे कोई भी कैरियर अपनाएँ या कहीं भी कार्य करना पसंद करें आपको वैश्वीकरण का प्रबंध करना सीखना होगा ताकि लागत न्यूनतम हो और लाभ अधिकतम। इस संबंध में मैं आपको कोई प्राइमर देने की सोच भी नहीं सकता। मैं कुछ कम महत्वाकांक्षी बात कहने का प्रयत्न करूँगा। मैं इस मुद्दे को और निकट से देखने की कोशिश करूँगा और यह समझाने का प्रयास करूँगा कि हम रिज़र्व बैंक में वैश्वीकरण के इन द्वंद्वों का कैसे मुक़ाबला करते हैं। इससे पहले कि मैं यह करूं , वातावरण निर्मिती के लिए मैं पहले वैश्वीकरण पर बहस का संदर्भ लूँगा।

वैश्वीकरण संबंधी बहस

8. सरल शब्दों में यह कह देना कि वैश्वीकरण एक बहस का मुद्दा है, एक छोटी बात होगी। वैश्वीकरण पर छिड़ने वाली यह बहस बहुत ज़िंदादिल, उत्तेजक, तीखी, गलत रूप से परिभाषित, अस्तव्यस्त, शोर-शराबे से भरी, रचनात्मक, गंदी तथा आकृतिहीन रही है। आप इनमें से जो भी विशेषण चुनते हैं उसी से पता चलता है कि आप बहस में कहाँ खड़े हैं। लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि यह एक ऐसी बहस है जिसने मॉडरेशन पर भृकुटि चढ़ाई है। इसके समर्थकों के लिए, वैश्वीकरण, सामूहिक खुशहाली और कल्याण का सर्वश्रेष्ठ रास्ता है। दूसरी ओर इसके आलोचकों के लिए यह कभी न खत्म होने वाली बुराई है। वे अपने तर्क के पक्ष में शक्तिशाली इमेज दिखाते हैं - विकासशील देशों में शोषण की दुकानें, एमेज़ोन वर्षावन का अवश्रेणीकरण, कमज़ोर अर्थव्यवस्थाओं में कृषक खेती क्षरण, तथा विश्व के औद्योगिक कस्बों में तेज़ाब की बारिश।

9. जैसा कि जीवन में अधिकांशतः होता है, यह बहस भी दोहरे मुद्दों वाली नहीं हो सकती। दोनों ओर के तर्क कुछ-कुछ सही हैं और जैसा कि हमने अभी देखा कि इसका सर्वोत्तम रास्ता है नकारात्मकताओं को न्यूनतम करना और सकारात्मकताओं को अधिकतम करना।

10. वैश्वीकरण की बहस व्यापक आधार वाली है जिसमें कई मुद्दे और विचार फैले हुए हैं । इनमें से कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे इस प्रकार हैं:

i. वैश्वीकरण गरीबों और कमज़ोरों का शोषण करता है और परंपरागत आजीविकाओं को नष्ट करता है।

ii. यह राष्ट्र के भीतर और राष्ट्रों के बीच असमानताएँ बढ़ाता है।

iii. यह वैश्विक बहुराष्ट्रीय कार्पोरेशनों को प्रमोट करता है , लाभ ही जिनका एकमात्र लक्ष्य होता है और उनके कारण जो नकारात्मक बाह्यताएँ पैदा होती है उनके प्रति वे एकदम असंवेदनशील होते हैं।

iv. इससे पर्यावरणीय अवश्रेणीकरण होता है।

v. यह राष्ट्रों की प्रभुसत्ता को कम कर देता है।

11. मैं इन मुद्दों पर जाना नहीं चाहता। यह एक सुविचारित मुद्दा है और इस बहस में कुछ और जोड़ कर कोई तुलनात्मक लाभ नहीं मिलने वाला। मैं तो सिर्फ तीन प्रश्न करना चाहता हूँ। ये तीन मैंने इसलिए चुने क्योंकि अंशतः तो ये कम परिचित थीम्स हैं और अंशतः कुछ नई घटनाओं के कारण इन मुद्दों के इर्द-गिर्द बहस नई रीति से शुरू हुई है। ये तीन प्रश्न हैं:

i. क्या वैश्वीकरण अपरिहार्य है ?

ii. क्या भूगोल ही भाग्य है ?

iii. क्या वित्तीय उदारीकरण से बचा जाए ?

क्या वैश्वीकरण अपरिहार्य है ?

12. ज्यादातर लोग मानते हैं कि आज की तेज प्रौद्योगिक प्रगति के युग में जहाँ कि सभी देश तेजी से आर्थिक उदारीकरण को अपना रहे है, वैश्वीकरण अपरिहार्य है। यह धारणा रखने वाले अधिकांश लोग सोचते हैं कि वैश्वीकरण अनन्यतः बीसवीं सदी की ही अपज है और यह तेज़ी से ऊपर बढ़ रहा है।

13. परंतु यह एक भ्रांति है - बीसवीं सदी की तो बात ही दूर है। वैश्वीकरण का अपना एक लम्बा इतिहास है जो पंद्रहवीं और सोलहवीं सदी में समुद्री यात्राओं द्वारा की जाने वाली खोजों से शुरू हुआ और बाद की सदियों में यूरोपीयन ताकतों द्वारा कालोनियाँ बसाने से होकर गुजरा। कालोनियाँ तो गई परंतु कॉलोनियल साम्राज्यों द्वारा फैलाया गया व्यापार और वाणिज्य आज भी जिंदा है।

14. यह भी नहीं है कि 500 वर्ष पूर्व शुरू हुआ वैश्वीकरण, स्थिर चाल से रैखिक पथ पर और गहरा होता गया। इसके विपरीत यह बढ़ा और फिर घटा (चार्ट-2)।

15. जैसा कि चार्ट II के आंकड़ों से पता चलता है कि 1870 से शुरू होकर लगभग 150 वर्षों तक वैश्वीकरण स्थिर गति से गहराता गया और प्रथम विश्व युद्ध की शुरु आत के आसपास यह शिखर तक पहुँच गया। बदलते राजनीतिक समीकरणों तथा महामंदी के दुष्परिणामों की वजह से युद्ध के बीच की अवधि में इसमें गिरावट आई। दूसरे विश्वयुद्ध के पश्चात यह प्रवृत्ति उलटी; तथा न केवल ट्रेड बल्कि वित्त में भी वैश्वीकरण ने गत छह दशकों में काफी तेज़ी दिखाई (चार्ट-3)।

16. प्रश्न यह है कि क्या इस वैश्वीकरण की इस लहर में कुछ ऐसा खास है जो कि इसे पिछले एपीसोड से अलग दिखाता है और इसे अपरिहार्य और अनुत्क्रमणीय बनाता है। इस तर्क के समर्थन में पेश की जाने वाली दो ताकते हैं। टेक्नॉलोजी में हुई प्रगति, खासकर संचार की गति और गुणवत्ता में हुआ सुधार और ट्रांस्पोर्ट लागतों में आई नाटकीय गिरावट।

17. यह सच है कि टेक्नॉलोजी की प्रगति और ट्रांस्पोर्ट लागतों में आई गिरावट व्यापार के लाभों को बढ़ाने तथा वैश्वीकरण की स्थिति मजबूत करने के अवसर प्रदान करती है। परंतु मात्र अवसर उपलब्ध होना ही इस बात की गारंटी नहीं है कि विश्वभर की सरकारें खुले व्यापार और खुले वित्त के प्रति प्रतिबद्ध रहेंगी। यह प्रतिबद्धता राजनीतिक बाध्यताओं की मिट्टी में बड़ी आसानी से गुम हो सकती है। यदि किसी देश को यह लगता है कि उसका तुलनात्मक लाभ खत्म हो रहा है या वैश्वीकरण की कीमतें लाभों से ज्यादा बढ़ रही है। तो एक सुविचारित स्थिति यह होगी कि हालांकि आज का वैश्वीकरण टेक्नॉलोजी की प्रगति तथा गिरती ट्रांस्पोर्ट की लागतों के कारण मज़बूत स्थिति पर आधारित है, फिर भी राजनीतिक गतिशीलता इस बात की कोई गारंटी नही देती कि वे अनुत्क्रमणीयता की राह पर इसके साथ चलेंगी।

18. मैं अपने दूसरे प्रश्न पर आता हूं जो राजनीतिक बाध्यताओं के कारण वैश्वीकरण को होने वाले खतरों के संबंध में है।

चार्ट 2 : वैश्विक जीडीपी के अनुपात के रूप में वैश्विक व्यापार (स्थायी कीमतें)

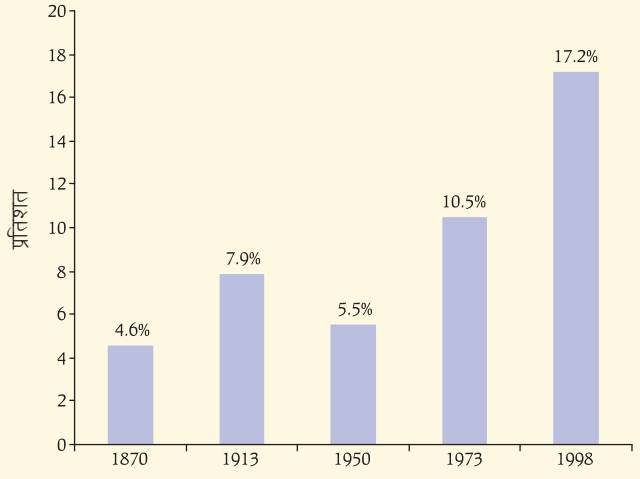

स्रोत : मैडिसन (2001)

चार्ट 3 : वैश्विक जीडीपी के अनुपात के रूप में विदेशी आस्तियां

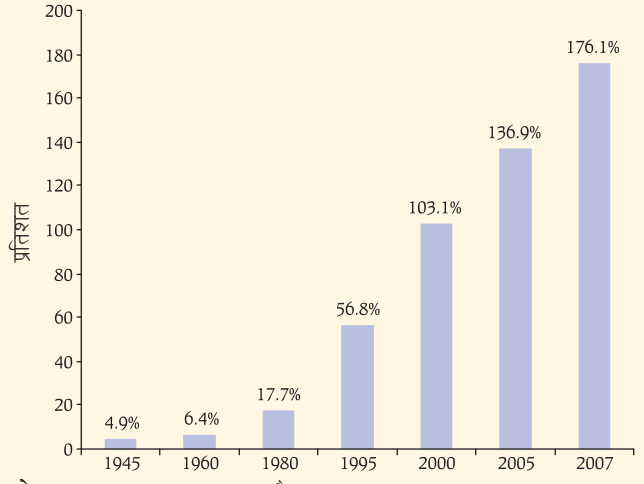

स्रोत : 1995 तक क्राफ्ट्स (2000) और http://www.philiplane.org/EWN.html (2009) पर राष्ट्रों की विदेशी संपदा के डाटा सेट

क्या भूगोल ही भाग्य है ?

19. अपनी सर्वाधिक बिक्रीवाली पुस्तक ''गन्ज़, जर्म्स, एंड स्टील'' में पर्यावरण जीव, वैज्ञानिक जेअर्ड डायमेंड ने कहा है कि उन्नत सभ्यताएँ अफ्रीका, अमरीका, अथवा प्रशांत की बजाय यूरेशिया में बनी और विकसित हुईं। क्योंकि यूरेशिया में ऊँची उपजाऊ भूमि और पशुओं का लाभ था जिन्हें पालतू बनाया जा सकता है। सन 1500 तक अपनी कृषि का विकास करके यूरोपियन लोगों ने मिलिटरी से जीत, और बीमारियों के फैलाव द्वारा विश्व पर आधिपत्य करने के लिए अपनी बंदूकों, जर्म्स, तथा स्टील का प्रयोग किया। डायमंड के अनुसार जीव विज्ञान अथवा प्रजाति विश्व इतिहास का रास्ता तय नहीं करती बल्कि यह 'भूगोल' है जो सभ्यताओं के उत्थान और पतन को निर्धारित करता है।

20. 'भूगोल ही भाग्य है' का सिद्धांत, जिसने हमारे लिखित इतिहास पर अधिकतर कब्ज़ा किया है की अभी से सूचना प्रौद्योगिकी-चालित वैश्वीकरण से कड़ी चुनौती मिल रही है। आज की सच्चाई यह है कि भूगोल असंगत है। किसी भी देश का भाग्य अब उसकी भौगोलिक अवस्थिति अथवा उसके भौतिक संसाधनों से जुड़ा हुआ नहीं है।

21. ज्ञान-चालित वैश्वीकरण के इस युग में देशों के लिए संभव हो चला है कि वे मानव संसाधनों के अपने तुलनात्मक लाभ के द्वारा अपनी भौगोलिक कमज़ोरियों पर विजय पा लें। सस्ते कार्मिकों की खोज में, भौगोलिक सरहदों के पार, ब्लू कॉलर जॉब्स में बदलाव, पारम्परिक समझदारी का एक लम्बे समय से हिस्सा रहा है। लेकिन नई बात यह हो रही है कि ये बढ़ते हुए वाइट कॉलर जॉब्स, जो एक जमाने में विदेशी प्रतियोगिता से सुरक्षित समझे जाते थे अब दूसरे देशों में भेजे जा रहे हैं और इसीलिए अब नए नए जुमले बन गए हैं जैसे 'दूरी का अंत', तथा 'लोकेशन पर विजय' आदि।

22. यह शिफ्टिंग, तुलनात्मक लाभ सेवा क्षेत्र में सबसे अधिक दिख रहा है। अब केवल डाटा प्रोसेसिंग तथा कॉल सेंटरों जैसी छोटी सेवाएं ही ''आउट-सोर्स'' नहीं की जा रहीं, बल्कि ऊँचे किस्म की कौशल गहन सेवाएँ भी आउटसोर्स की जा रही हैं। इस प्रकार अब चेन्नै के वित्तीय विश्लेषक, शिकागो के ग्राहकों को टैक्स परामर्श सेवाएं प्रदान कर रहे हैं, ब्यूनॉसआयर्स के इन्जीनीयर्स बर्लिन के लिए सड़कें और पुल डिज़ाइन कर रहे हैं, और मनीला के रेडियोलॉजिस्ट्स मान्चेस्टर के मरीजों को मेडीकल डाइग्नोस्टिक्स की सेवाएं प्रदान कर रहे हैं। दूसरी ओर लॉन्ड्री, द्वारपाल तथा टैक्सी ड्राइवर जैसी कम स्तर की सेवाएँ वहीं से दी जा रही है जहाँ वे स्थित हैं।

23. यह प्रवृत्ति भूगोल की बाध्यताओं के विपरीत चल रही है और वैश्वीकरण के लिए इसके महत्वपूर्ण असर हो सकते हैं, सिद्धांत यह रहा है, और अभी भी है, कि परिपक्व अर्थव्यवस्थाएं अपनी निचले स्तर की नौकरियाँ उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को आउटसोर्स करती हैं और स्वयं अधिक उत्पादक जॉब्स के लिए वेल्यू श्रृंखला में ऊपर की ओर बढ़ती हैं परंतु ऊँचे स्तर की जॉब्स की आउटसोर्सिंग से स्पष्ट हो जाता है कि यह कहानी स्क्रिप्ट के अनुसार नहीं चल रही है।

24. वास्तविक रूप से आउट सोर्स की गई नौकरियों की संख्या कम हो सकती है लेकिन मात्र यह संभावना, कि यह आउटसोर्स हो सकती है, ने अलिखित सामाजिक संविदा में उथल-पुथल मचा दी है क्योंकि आउटसोर्सिंग की संभावना मात्र से ही कामगारों की तोल मोल करने की शक्ति क्षरित हो जाती है और उन्हें अपनी मज़दूरी बढ़ाने की मांग को ढीला रखने पर मजबूर होना पड़ता है। उदाहरण के लिए, अमरीका में, गत दशक में राष्ट्रीय आय में वेतन का हिस्सा धीरे-धीरे नीचे गया है जबकि कार्पोरेट्स के प्रॉफिट्स के हिस्से में वृद्धि हुई है जिससे वर्कर्स की तोलमोल करने की शक्ति में गिरावट का साक्ष्य मिलता है। यदि इस प्रवृत्ति को सही नहीं किया गया तो वर्कर्स बेचैन हो सकते हैं और सुरक्षात्मक उपायों की माँग कर सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि मुक्त व्यापार में वैश्विक कल्याण को बढ़ाने की क्षमता है परंतु राष्ट्रीय स्तर पर इसकी प्रगति में राजनैतिक बाध्यताओं के कारण रुकावट आ सकती है और फिर भूगोल, फिर से हमारा भाग्य बन सकता है।

क्या वित्तीय वैश्वीकरण को समाप्त किया जा सकता है/जाना चाहिए ?

25. एक ऐसी प्रभावशाली विचारधारा भी है जो वैश्वीकरण के प्रति एक सुविचारित दृष्टिकोण रखती है व्यापार उदारीकरण तथा वित्तीय उदारीकरण के बीच तर्क यह है कि जहाँ देशों के बीच बढ़ता व्यापार दोनों व्यापारिक पार्टनरों के लिए सकारात्मक होता है, यह आवश्यक नहीं कि वित्तीय लिंकेज के लिए भी यह सच हो। जल्दबाज़ी और बिना समझदारी का वित्तीय उदारीकरण, गत 25 वर्षों में कई वित्तीय संकटों का मुख्य कारण रहा है और खासकर 1990 के अंत में आया एशियाई संकट। इस दृष्टिकोण के अनुसार, जहाँ व्यापारिक उदारीकरण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, और मान्य किया जाना चाहिए, वहीं, वित्तीय उदारीकरण के बारे में देशों को सावधान रहना चाहिए।

26. यह स्थिति दो सवाल खड़े करती है, पहला क्या वित्तीय उदारीकरण स्वभाव से ही बुरा है ? और दूसरा क्या वित्तीय उदारीकरण के बिना व्यापारिक उदारीकरण कर पाना संभव है ? अब मैं इसे संक्षेप में स्पष्ट करता हूँ।

27. व्यापारिक उदारीकरण के समर्थन में अनुभवजन्य साक्ष्य प्रस्तुत किया जाता है, यह दिखाने के लिए कि, व्यापारिक खुलेपन तथा आर्थिक खुशहाली के बीच एक कार्य-कारण सिद्धांत है। यह भी तर्क दिया जाता है कि व्यापार को खोलने से उद्यमशीलता, उत्पादकता में सुधार तथा भौतिक और सामाजिक इन्फ्रास्ट्रक्चर के संदर्भ में स्पिल-ओवर प्रभाव होता है। यह स्पष्ट नहीं है कि कोई यह अनुमान कैसे लगाए कि वित्तीय उदारीकरण, इसी प्रकार के समवर्ती (co-lateral) प्रभाव प्रस्तुत नहीं करता है। असल में वित्तीय खुलापन, वित्तीय बाज़ारों को गहरा और व्यापक बनाने में मदद देता है, स्पर्धा को बढ़ाता है, क्षमता में वृद्धि करता है और कार्पोरेट गवर्नेंस के मानदंडों में सुधार लाता है। दूसरी ओर यह भी सच है, कि वित्तीय उदारीकरण को एक सकारात्मक शक्ति बनने के लिए कुछ पूर्व शर्तें पूरी करनी भी जरूरी होती हैं। खासतौर पर सरकार की बजटीय स्थिति मजबूत होनी चाहिएँ, विनियमन और पर्यवेक्षणीय प्रणालियाँ प्रभावी होनी चाहिए और वित्तीय संस्थाओं के भीतर आंतरिक नियंत्रण स्थापित करने के लिए क्षमता होनी चाहिए।

28. इस मुद्दे पर मेरी व्यापक स्थिति यह है कि वित्तीय उदारीकरण व्यापारिक उदारीकरण, की भाँति, संपार्श्विक लाभों सहित भारी लाभ दे सकता है। तथापि, वित्तीय उदारीकरण प्रोत्साहित करते समय, यह याद रखना भी जरूरी है कि वित्तीय क्षेत्र की अपनी कोई जगह नहीं होती, यह अपनी मजबूती और रेज़िलीएंस, संपदा अर्थव्यवस्था से प्राप्त करता है। यह संपदा क्षेत्र की ज़रूरत है कि वह वित्तीय क्षेत्र उदारीकरण को चालित करे, न कि इसके उलट।

वैश्वीकरण पर रिज़र्व बैंक का दृष्टिकोण

29. अब मैं वैश्वीकरण के कारण, रिज़र्व बैंक, जिन द्वन्द्वों में घिरता है, उस पर आता हूँ। जब हमारी अर्थव्यवस्था अपेक्षाकृत कम खुली थी, तब हमारे लिए, मौद्रिक नीति निर्माण काफी आसान होता था और जब हम विश्व के साथ और अधिक एकीकृत हो गए हैं तो हमें अपनी नीतियाँ बनाते समय, विश्व की घटनाओं की ओर देखना पड़ता है जिन पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं।

असंभव त्रिकोण

30. अवधारणात्मक अर्थों में, अर्थव्यवस्था को खुला करने के कारण, रिज़र्व बैंक के सामने जो चुनौतियाँ आती हैं, उन्हें सबसे अच्छी तरह, असंभव त्रिकोण तर्क द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है, जो यह कहता है कि कोई भी देश, मुक्त पूँजी प्रवाहों, एक नियत (स्थिर) विदेशी मुद्रा दर, तथा एक स्वतंत्र मौद्रिक नीति के, सभी तीनों नीतिगत लक्ष्य, एक साथ बनाकर नहीं रख सकते जैसा कि आधी सदी में अर्थशास्त्र के छात्रों ने सीखा है। इस असंभव त्रिकोण

असंभव त्रिकोण

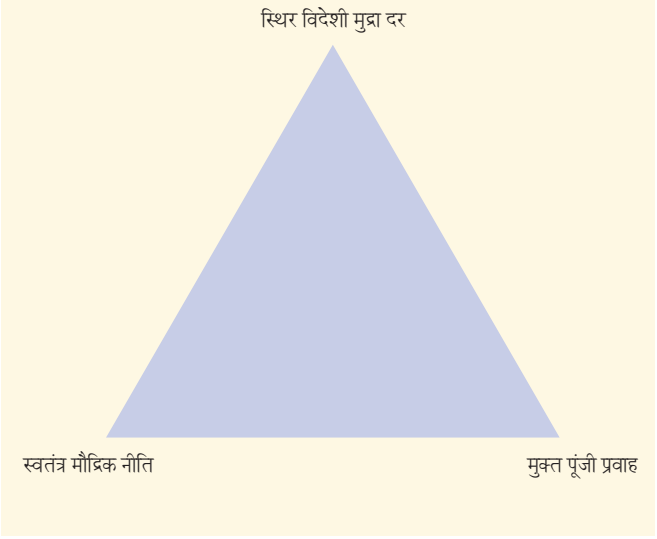

की, 1960 के दशक में विकसित मेंडेल-फ्लेमिंग मॉडल में मज़बूत सैद्धांतिक नींव है।

31. असंभव त्रिकोण की त्रिविधा को देखते हुए, देशों ने, अपनी भिन्न-भिन्न पसंद बना रखी है। सबसे आम उदाहरण जो कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में पाया जाता है वह है स्थिर विदेशी मुद्रा को छोड़ देना ताकि एक स्वतंत्र मौद्रिक नीति के साथ एक खुली अर्थव्यवस्था चला सके। दूसरी ओर वे अर्थव्यवस्थाएँ हैं, जो मौद्रिक नीति की स्वतंत्रता के त्याग को अपनाती हैं। इसके उदाहरणों में हाँगकांग तथा अर्जेंटीना द्वारा स्थापित किए गए करेंसी बोर्ड्स है और अभी हाल ही में 'सेफ हेवन' प्रभाव के परिणामस्वरूप, स्विस फ्रैंक में आई तेज़ी के प्रत्युत्तर में, स्विट्ज़रलैंड ने पूर्व घोषित मुद्रा दर को डिफैंड करने की अपनी प्रतिबद्धता की घोषणा की।

32. उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में जो कि कॉर्नर समाधानों का विकल्प चुनती हैं, उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने, माध्यमिक समाधानों का विकल्प चुना, और तीनों में से प्रत्येक में, थोड़ी-थोड़ी ढील दी ताकि समग्र वृहत् आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

असंभव त्रिकोण के प्रति भारत का दृष्टिकोण

33. भारत में भी हमने बीच का समाधान चुना, जिसके अनुसार (i) हम अपनी विदेशी मुद्रा दर अधिकांशतः बाजार से ही निर्धारित होने देते हैं, परंतु अधिक उतार-चढ़ाव को सहज बनाने के लिए और/अथवा वृहत् आर्थिक स्थिरता में छेड़छाड़ को रोकने के लिए बाज़ार में हस्तक्षेप करते हैं, (ii) हमारा पूँजी खाता केवल अंशतः खुला है, विदेशियों की हमारे शेयर बाज़ारों में अधिकांशतः अबाधित पहुँच

है परंतु कर्ज़ बाज़ारों में उनकी पहुँच सीमित रखी गई हैं, इसकी भी सीमा है कि निवासी-कार्पोरेट्स तथा व्यक्ति, विदेश में निवेश के लिए कितना निकाल सकते हैं। परंतु ये सीमाएँ काफी उदार हैं तथा (iii) विदेशी मुद्रा दर तथा पूँजी खातों में उदारीकरण के कारण हम कुछ मौद्रिक नीति स्वतंत्रता खो सकते हैं। बीच के इस समाधान में यह भी शामिल है कि हमें तीनों मोर्चों की सुरक्षा करनी है और हमारी बृहत् आर्थिक स्थिति के अनुसार इन तीनों स्तंभों में से, जिसपर भी अधिक ध्यान देने की जरूरत होगी उस पर ध्यान देना होगा।

पूंजी प्रवाह

34. इस असंभव त्रिकोण का व्यावहारिक अर्थों में क्या आशय है, अब हम पूँजी प्रवाहों की दृष्टि से इसकी जाँच करते हैं। निस्संदेह हमें पूँजी प्रवाहों की ज़रूरत है क्योंकि हमारे चालू खाते में घाटा (सीएडी) है। एक आदर्श विश्व में हमारे पास इतने पूँजी प्रवाह होने चाहिएँ कि हमारे पूँजी खाते के घाटे को पूरा करने के लिए पर्याप्त हों, साथ ही कर्ज़ प्रवाहों के मुकाबले इक्विटी प्रवाहों की प्राथमिकता होनी चाहिए। और अल्पावधि प्रवाहों के मुकाबले दीर्घावधि प्रवाहों की प्राथमिकता होनी चाहिए परंतु वास्तविक विश्व में ऐसे सुनहरे मौके हमें कभी कभार ही मिलते है पूँजी प्रवाह कभी तो ज़्यादा हो जाते हैं और कभी कम रह जाते हैं।

35. जब पूँजी प्रवाह सीएडी से बहुत अधिक हो जाते हैं तो विदेशी मुद्रा दर बुनियादी आधार (फंडामेंटल्स) की तुलना में बढ़ जाती है और यदि इन प्रवाहों में उतार चढ़ाव हो रहा हो तो यह हमारी विदेशी मुद्रा की गतिविधि में भी परिलक्षित होगा। ऐसे में रिज़र्व बैंक को यह निर्णय लेना पड़ता है कि वह विदेशी मुद्रा बाज़ार में हस्क्षेप करे अथवा नहीं परंतु यह कार्य इतना सीधा नहीं है जितना कि दिखता है। यदि हम बाज़ार में विदेशी मुद्रा खरीदने के लिए हस्तक्षेप करते हैं तो उतार-चढ़ाव कम हो जाता है और विदेशी मुद्रा दर में बढ़ोतरी सीमित हो जाती है, परंतु प्रणाली में रुपए की लिक्विडिटी बढ़ जाती है, जिससे कि स्फीतिकारी दबाव बढ़ता है।

36. जैसा कि हम जानते हैं, स्फीति से मुद्रा में ''रियल-एप्रीसिएशन'' होता है इसलिए मुद्रा के ''नामिनल-एप्रीसिएशन'' की समस्या को सुलझाने के हमारे, प्रयास रियल एप्रीसिएशन की समस्या में उतर आते हैं।

37. इस समस्या के समाधान अर्थात् स्फीतिकारी दबावों को सीमित रखने के लिए हम कभी-कभी अतिरिक्त लिक्विडिटी को 'अवरुद्ध' कर देते हैं। इससे स्फीतिकारी दबाव तो रुक जाते हैं परंतु अन्य कई समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। इस अवरुद्धिकरण से ब्याज दरों पर ऊपरी दबाव पड़ता है जिससे हमारी प्रतियोगितात्मकता क्षरित हो जाती है। ऊँची ब्याज दरों से अधिक पूँजी प्रवाह भी आकर्षित होते हैं जिससे फिर से जिस समस्या का हल हम ढूंढने चले थे वही और बढ़ जाती है। जैसा कि आप देख रहे है कोई भी समाधान सीधा सादा नही हैं, हर समाधान एक नई समस्या खड़ी करता है।

38. उतार-चढ़ाव वाले पूँजी प्रवाह भी इसी तरह के जटिल नीतिगत विकल्प खड़े करते हैं। इस मामले में भी विदेशी-मुद्रा-दर गिरावट की प्रवृत्ति दिखाती है और बुनियादी आधार से हटती है जिससे स्फीतिकारी दबाव बढ़ते हैं और सरकार तथा कंपनियों को भी चोट पहुँचाते हैं जिनकी कि विदेशी कर्ज़ बाध्यताएँ होती हैं। बहिर्प्रवाह की स्थिति में भी चालू खाते घाटे का वित्तपोषण भी एक समस्या बन सकता है।

39. जब अन्तर्प्रवाह और बहिर्प्रवाह दोनों हमारी ज़रूरत की सीमा से बाहर चले जाते हैं तो रिज़र्व बैंक को सोचना पड़ता है कि उतार-चढ़ाव को रोकने और अस्थिरता को रोकने के लिए विदेशी मुद्रा बाज़ार में हस्तक्षेप करे अथवा नहीं। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है कोई भी विकल्प पूरी तरह हितकर नहीं है, हम कोई भी विकल्प चुनें कीमत तो चुकानी ही पड़ेगी। हमारा प्रयास सदा पूंजी प्रवाहों को चालित करने वाली शक्तियों के आकलन पर होना चाहिए और हमें केवल विदेशी मुद्रा दर की गतिविधि में उतार-चढ़ाव को सीमित करने तथा वृहत् आर्थिक स्थिति की रुकावटों को दूर करने के लिए ही कार्रवाई करनी चाहिए। ऐसा करते समय हमें स्फीति की स्थिति, हमारी विदेशी मुद्रा भंडारों की मजबूती और इससे भी ज़रूरी, हमारे द्वारा की जा रही कार्रवाई की क्रेडिबिलिटी पर ध्यान देना जरूरी है।

उतार-चढ़ाव वाले पूँजी प्रवाहों की कई स्थितियाँ

40. गत दशक में पूँजी प्रवाह एक काफी विवादास्पद समस्या रहा है। यहाँ हमने उतार चढ़ाव वाले अन्तर्प्रवाहों और बहिर्प्रवाहों की कई कथाएँ देखी हैं जिनमें समस्या प्रायः अचानक उलटी दिशा में चलने लगती है। अब मैं आपको इसका रूप स्पष्ट करूँगा ताकि आपको पता चले कि हमें किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

41. वैश्विक संकट के पहले के वर्षों में ग्रेट मॉडरेशन के दौरान-वैश्विक प्रणाली में अत्यधिक लिक्विडिटी होने के कारण निवेशकों द्वारा लाभ की खोज के कारण तथा भारत में वृद्धि की संभावनाओं की वजह से हमारे पूँजी प्रवाह हमारे सीएडी से बढ़ गए थे (चार्ट 4)। रुपया तेज़ी से बढ़ा जिससे हमारी प्रतियोगितात्मकता पर प्रहार हुआ। रिज़र्व बैंक ने विदेशी मुद्रा खरीदने के लिए बाज़ार में हस्तक्षेप किए और रुपए की लिक्विडिटी को अवरुद्ध किया।

चार्ट 4 : भारत-भुगतान संतुलन चालू और पूंजी खाते

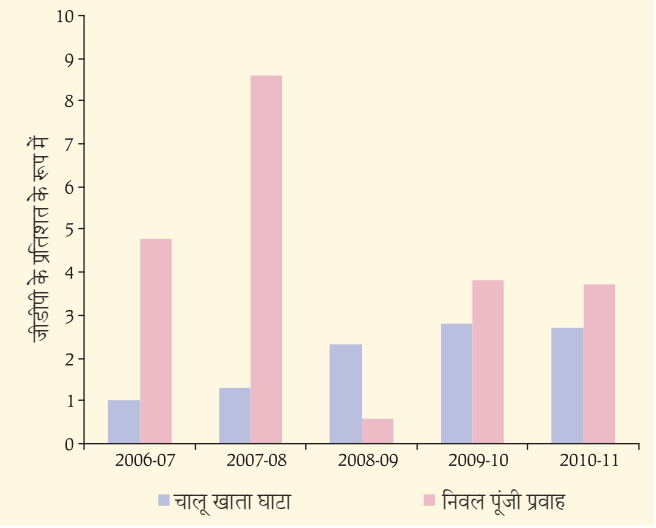

42. सितम्बर 2008 के वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप पूंजी अन्तर्प्रवाह की समस्या अचानक पूंजी बहिर्प्रवाह की समस्या में बदल गई। घोर अनिश्चितता के कारण वैश्विक निवेशक भारत से बाहर निकल गए जैसा कि उन्होंने सुनिश्चित स्थानों पर जाने के लिए अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के साथ किया था। इस अचानक निकास ने रुपए पर निचली ओर दबाव डाला और इस बार हमें रुपए के तेज़ी से उतार चढ़ाव ह्रास को नियंत्रित करने के लिए, विदेशी मुद्रा बाज़ार में हस्तक्षेप करना पड़ा।

43. जैसे ही संकट धीमा पड़ना शुरू हुआ पूँजी प्रवाहों की समस्या की दिशा ने फिर एक बार अपना रूख बदला। दो गतियों वाली रिकवरी, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा मात्रात्मक ईज़िंग तथा इससे भी ज्यादा, उनकी गाइडेंस कि उनकी सहज मौद्रिक स्थिति आने वाले समय में भी बरकरार रहेगी, इन दोनों ने विश्व की अधिक लिक्विडिटी को उभरती अर्थव्यवस्थाओं में धकेल दिया जिससे उनकी विदेशी मुद्राओं की दर बढ़ गई। 2010 तथा 2011 के शुरू में अधिकतर यही हालात रहे। उभरती अर्थव्यवस्थाओं को इसका मुकाबला मौद्रिक हस्तक्षेपों तथा पूंजी नियंत्रणों से करना पड़ा। इस पूरी अवधि के दौरान जी-20 की बैठकों में चर्चा का एक प्रमुख मुद्दा यही बना रहा कि 'मुद्रा युद्धों' को कैसे रोका जाए। उभरती अर्थव्यवस्थाओं का यह कहना था कि वित्तीय स्थायित्व पूरे विश्व के लिए एक अच्छाई है और खास तौर पर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को अपनी घरेलू नीतियों के ''स्पिल-ओवर-प्रभाव'' पर ध्यान देना चाहिए।

44. यह 'मुद्रा-युद्ध' तो थोड़े ही दिन रहे। 2011 के उत्तरार्ध में यूरो ज़ोन प्रभुसत्ता कर्ज़ संकट गहराया तो वैश्विक पूँजी ने अपनी दिशा फिर से बदल दी जिससे उभरती अर्थव्यवस्थाएँ सुरक्षित स्थानों की खोज में फिर बाहर निकल गई। उभरती अर्थव्यवस्थाओं की मुद्राएँ, जिनमें रुपया भी शामिल था, काफी गिरी। 4 अगस्त से 15 दिसम्बर 2011 के बीच रुपए में लगभग 15 प्रतिशत की गिरावट आई। हालांकि उसके बाद से इसने कुछ हानि पूरी की है। विदेशी मुद्रा की गति के उतार-चढ़ाव को सहज बनाने के लिए रिज़र्व बैंक को बाज़ार में हस्तक्षेप करना पड़ा।

45. मैंने पूँजी प्रवाहों के संदर्भ में काफी विस्तार से घटनाओं का वर्णन किया है, यह दिखाने के लिए कि न केवल यह समस्या अपने आप में काफी बड़ी है बल्कि पूरी तरह बाहरी क्षेत्र की घटनाओं के कारण अचानक यह समस्या अपना रूख बदल सकती है जबकि हमारी बुनियादी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ होता।

वैश्वीकरण-चुनौतियाँ और अवसर

46. अब तक आपको पता चल गया होगा कि वैश्वीकरण के कारण हम रिज़र्व बैंक में किस तरह की चुनौतियों का समाना करते हैं। परंतु आपको यह भी स्वीकार करना चाहिए कि वैश्वीकरण जितनी जटिल नीति संबंधी चुनौतियाँ प्रस्तुत करता है, उतने ही सुनहरे अवसर भी प्रदान करता है। जिन आर्थिक सुधारों ने वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ भारत के एकीकरण के लिए मंच प्रदान किया है उसी ने हमारी वृद्धि दर बढ़ाने तथा गरीबी घटाने में मदद की। हालांकि कुल मिलाकर हम एक बड़ी अर्थव्यवस्था हैं फिर भी प्रति व्यक्ति आय तथा सामाजिक संकेतकों की दृष्टि से हम अभी भी एक गरीब देश हैं। आपकी पीढ़ी के लिए चुनौती यह है कि आप भारत की वृद्धि दर को तेज़ करें और वृद्धि को समावेशित बनाएँ और आपको इस चुनौती को एक वृद्धिशील वैश्वीकृत भारत में पूरा करना होगा। मुझे यकीन है कि इस प्रयास में भाग लेना आपके लिए बौद्धिक दृष्टि से उत्तेजक तथा भावनात्मक दृष्टि से संतुष्टिदायक होगा।

47. अपने व्यावसायिक कैरियर में हर सफलता पाने और अपने वैयक्तिक जीवन में प्रसन्नता और संतुष्टि के लिए मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

संदर्भ

-क्राफ्ट्स, निकलस (2000) : *''ग्लोबलाइज़ेशन एण्ड ग्रोथ इन ट्वेंटियथ सेन्चुरी''* आइएमएफ वर्किंग पेपर 00/44 इन्टरनेशनल मॉनेटरी फण्ड, वाशिंगटन डी.सी.

-डायमण्ड जेअर्ड : *गन्स, जर्म्स एण्ड स्टील,* विन्टेज, लंदन, 1998"

-मैडिसन, एन्गस (2001) : *द वर्ल्ड इकोनोमी : ए मिलेनियल पर्सपेक्टिव* (पेरिस ओईसीडी)।